कात्यायनी का कविता-परिवेश

✧ डॉ. संगीता सक्सेना

समकालीन हिन्दी कविता में कात्यायनी एक महत्वपूर्ण नाम है। पिछले दो दशकों में उनके तीन काव्य संग्रह आ चुके हैं– 'सात भाईयों के बीच चंपा', 'इस पौरूषपूर्ण समय में'' तथा 'जादू नहीं कविता'। अपनी कविताओं को एक व्यापक कैनवास देते हुए उन्होंने समकालीन परिवेश का वैविध्यपूर्ण रूपायन किया है। राजनैतिक–सामाजिक –आर्थिक–सांस्कृतिक–सरोकार उनकी कविता में बेहद सशक्त तरीके से प्रस्तुत हुए हैं। उनकी कविता प्रतिबद्ध कविता है जिसमें प्रखर राजनैतिक चेतना, व्यापक सामाजिक चिंतन के साथ ही संवेदनशील रागात्मकता भी समाहित है। स्त्री–जीवन की विडंबना और पुरूष वर्चस्व को अनावृत्त करते हुए वे सार्थक प्रश्न उठाती हैं और प्रचलित परंपराओं पर दस्तक ही नहीं देतीं, बल्कि प्रहार भी करती हैं। समकालीन हिन्दी कविता में 'स्त्री–दृष्टि' पर बात होगी तो उनका नाम निःसंदेह अग्रगण्य होगा। अपनी राजनैतिक प्रतिबद्धता को डंके की चोट पर घोषित करते हुए कात्यायनी लिखती है–

'दुनिया के तमाम देशों के तमाम आम लोगों तक/पहुंचेगी कविता/अलग–अलग रास्तों से होकर/अलग–अलग भेस में/और बताएगी उस सबसे सुंदर दुनिया के बारे में/जो अभी भी हमने देखी नहीं है/पर इसके लिए कम्युनिस्ट होना जरूरी है/पहले हमेशा से भी अधिक जरूरी/बेशक इतना ही काफी नहीं है/पर यह जरूरी है .....।'1

'कम्युनिज्म' को संपूर्ण मानव कल्याण का दर्शन मानने वाली कात्यायनी में कामरेडी तेवर हैं जिसके चलते वे दुनिया को और बेहतर तथा सुंदर बनाना चाहती हैं और यहीं वे मुक्तिबोध के निकट आ जाती हैं । प्रसिद्ध कवि विष्णु खरे लिखते हैं 'कात्यायनी शायद ऐसी अकेली रचनाकार है जो बदलाव के कई मोर्चों पर सक्रिय हैं और चूंकि उन्होंने इस समय और समाज का भयावह, निर्मम, दावेदार यथार्थ देखा है इसलिए उनमें अपनी कविता मात्र के औचित्य, प्रासंगिकता और कारीगरी को लेकर एक ऐसा आत्म–संघर्ष है जो शायद मुक्तिबोध और धूमिल के बाद उन्हीं में दिखाई देता है।'2 मुक्तिबोध ने बेहतर दुनिया के लिए एक मेहतर की बात की थी तो धूमिल कविता को हक जैसे मामूली शब्द के मोर्चे पर बहाल करने का माध्यम बताते हैं । कात्यायनी भी अपने मोर्चे पर सन्नद्ध हैं –

'सच्ची कविता निजी स्वामित्व के खिलाफ है और सच्चा कवि भी/इसलिए कवि को कभी–कभी लड़ना भी होता है।'3

मुक्तिबोध की ही तरह कात्यायनी ने भी मध्यमवर्गीय दोगलेपन और पाखंड को अनावृत्त किया है। अपनी एक कविता में शेष जी, महेश जी, दिनेश जी, गणेश जी और सुरेश जी के चरित्रों के माध्यम से उन्होंने मध्यमवर्गीय बौद्धिकों के घाघपन को तीखेपन के साथ अभिव्यक्त किया है। इस कविता में जनवाद, सेक्स, डंकल प्रस्ताव, मंहगाई, सांप्रदायिकता, फेमिनिज्म, स्टॉक एक्सचेंज तथा वामपंथी राजनीति जैसी बहुत सारी टिप्पणियों के बाद आम सहमति पर पहुंचे बौद्धिकों की छिछोरी मानसिकता का सशक्त तथा प्रभावी वर्णन किया है–

'तय करने से पहले अपनी रणनीति और रणकौशल/सबने फिर सोचा सबके बारे में/सबने सबको ताड़ा/फिर एक साथ मिलकर/ताड़ा हालात को/यहीं पर थी उनकी आम सहमति – एक बार फिर/सबने यह जाना/घर गये सभी आधी रात को/लेटे, डकारा, पेट पर, हाथ फेर कर बोले – हे राम ।'4

इस कविता में मध्यमवर्गीय बौद्धिकों के दोहरेपन का अनावरण करते हुए बताया गया है कि स्वहित तथा जबानी जमाखर्च के अतिरिक्त समाज की विसंगतियों से उनका कोई लेना–देना नहीं होता।

स्त्री–विमर्श के क्षेत्र में भी कात्यायनी एक सार्थक और पूर्वाग्रहयुक्त हस्तक्षेप करती हैं। उनके यहां पुरूष द्रोह का स्वर नहीं, बल्कि एक मनुष्य के रूप में स्त्री की मुक्ति की चर्चा है। सुप्रसिद्ध कवि विष्णु खरे लिखते हैं –'वे कविता में ही नहीं अपने जीवन में सिर्फ नारी मुक्ति नहीं, मानव मुक्ति के सक्रिय आंदोलन से जुड़ी हैं और अविभक्त दृष्टि से समाज को देखना जानती हैं, इसलिए उनमें पुरूष–मात्र से घृणा और दुश्मनी करने वाला बचकाना नारीवादी मर्ज नहीं है। वे अपने जैसे स्त्री–पुरूष बच्चों के असली शत्रुओं की शिनाख्त कर चुकी है ।'5 कात्यायनी की कविता में आई हुई 'स्त्री' में ऋग्वेद और मनुस्मृति से लेकर लोकजीवन और अत्याधुनिक संदर्भों में उपस्थित स्त्री की छबियां उभरी हैं। समाज और जीवन में सामंतवादी पुरूष वर्चस्व का प्रतिकार करती हुई उनकी स्त्रियां अपनी जड़ता को तोड़ने पर आमादा हैं। वे अपनी स्थिति और नियति के कारणों की पड़ताल कर चुकी हैं–

'हॉं उन्होंने यही/सिर्फ यही दिया हमें/अपनी वहशी वासनाओं की तृप्ति के लिए/दिया एक बिस्तर/जीवन घिसने के लिए, राख होते रहने के लिए/चौका–बर्तन करने के लिए बस एक घर।' 6 तथा

'मत उठाओ प्रश्न ब्रम्ह–सत्ता पर वह पुरूष है ! मत तोड़ो इन नियमों को/........./मत रचो नया लोकाचार/. ....../सोचो परिवार का हित/अपने इस घर को संभालो/मत जाओ प्रश्नों की सीमा से आगे/तुम्हारा सिर कटकर लुड़केगा जमीन पर'7

विख्यात आलोचक डॉ. मैनेजर पांडेय ने कात्यायनी की 'स्त्री दृष्टि' पर एक महत्वपूर्ण टिप्पणी की है ''दुनिया भर के कवियों ने घर की महिमा का बखान किया है लेकिन कात्यायनी उसे पुरूष सत्ता का गढ़ मानती है''8 पुरूष–सत्ता के इस गढ़ में स्त्री किस तरह जीती है इसका एक जीवंत वर्णन उनकी ''औरत और घर'' शीर्षक कविता में उपस्थित है जिसमें ऋचाओं, गीत और कविताओं में 'घर' और उसके माध्यम से ''औरत'' की बात की गई है ।

lgk;d ik/;kid ¼fgUnh½] 'kkldh; LukrdkRrj egkfo|ky;] ujflgx< ¼jktx<½

बिन धरनी घर भूत का डेरा जैसी कहावतें, घर का सुरक्षा–कवच, सुख सुविधाओं से घिरा घर जिसमें गैस, मिक्सी, मसालदानी, सिंक, वॉश–बेसिन, सिंगारदान, बेड–स्विच से जलने वाला नीला बल्ब इस घर में है जो औरत का हिस्सा बना दिया जा चुका है कि वह चाहे कहीं रहे, घर से मुक्त नहीं हो पाती, लेकिन एक दिन उस औरत ने एक प्रश्न किया–

''औरत क्या एक घर के बिना हो सकती है?/या फिर क्या कोई और भी चौहद्दी हो सकती है/सुखपूर्वक रहने, खाने–जीने के लिए/घर के अलावा/जिसमें रहते हुए औरत, औरत बनी रहे/और घर घर भी बना रहे, यानी वह न हो घर का हिस्सा/बल्कि उसकी एक बाशिंदा हो?'9

प्रश्न के उत्तर में उसे घर से निर्वासित कर पागलखाने में डाल दिया जाता है। जिसे प्रकृति ने पुरूष के पूरक रूप में सिरजा, वह कब अनुगामिनी बन गई इस स्थिति और नियति की पड़ताल करते हुए कात्यायनी ने स्त्री की मुक्ति के प्रश्न को पुरूष द्रोह में न ढूंढकर उसे मानव मुक्ति के वृहत्तर आयाम से जोड़ा है। डॉ. अरविंदाक्षन के शब्दों में ''कात्यायनी की इन समकालीन कविताओं में नारी अथवा नारी मुक्तिवादी दृष्टि है, स्त्री को स्त्री तक सीमित करने की दृष्टि नहीं । वह एक सीमित कटघरा नहीं है। मात्र लिंग–संदर्भी वर्चस्व से स्त्री को मुक्त करने की इच्छा ही उनमें प्रस्फुटित नहीं होती, बल्कि मानव–मात्र को मुक्त करने की सांस्कृतिक दृष्टि के रूप में ही उनकी इन कविताओं में नारी मुक्तिवादी दृष्टि विकसित हुई है।''10

कात्यायनी के रचना–संसार में 'व्यंग्य' एक तीखे हथियार के रूप में प्रयुक्त होता है । बात चाहे राजनैतिक विद्रूपताओं की हो, स्त्री की जड़ता की हो या पुरूष–वर्चस्व की हो, साहित्यिक बिरादरी में जड़ जमा रहे 'फेक' रचनाकारों की हो, वे अपने मारक व्यंग्य का अचूक प्रयोग करती हैं। कुछ उदाहरण दर्शनीय हैं –

''प्रभु ! यूनियनों की रीढ़ निकाल ले/इन्हें भ्रष्ट नेताओं से भर दे/हड़तालियों को कुचलवा दे प्रभु, जो नहीं रहना चाहते भूखे/उन्हें गोलियां खिला दे/प्रभु! जनतंत्र को बचा/जरूरत हो तो आपात्काल ला/तू चिरंतन है, जैसे कि लूट है चिरंतन/सिद्ध कर दे प्रभु!''11 तथा

तपती है कोयला बन अंगीठी में/राख होती रहती है/सिल पर मसाला बन पिसती है/सिंकती है मद्धिम ऑच पर/. ..../फुदकेगी गौरय्या सी/किलकेगी इशारों पर/नाचेगी–गायेगी/बस सोचेगी नहीं कभी भी/सो जाएगी किसी सहारे को पकड़े हुए।'12 तथा

शेष जी ने महेश जी को/महेशजी ने दिनेश जी को/दिनेश जी ने गणेश जी को/गणेश जी ने सुरेश जी को/और सुरेश जी ने शेष जी को/बताई कुछ राज़ की बातें और सुझाव दिये/लेखन संबंधी कि कैसे चमका जाए/बिना गरम हुए, जले, तपे,साहित्य के क्षितिज पर/............./संकलन कैसे छपाये जायें और/संपादक कैसे पटाये जायें।'13

कात्यायनी के काव्य–परिवेश में वात्सल्य की उष्मा का भी अनुभव किया जा सकता है। संभवतः सुभद्रा कुमारी चौहान के पश्चात् वे ऐसी दूसरी रचनाकार हैं, जिन्होंने शैशवोचित कोमल भावनाओं को वात्सल्य की सहज तरलता में लिपटा कर प्रस्तुत किया है। कोमल शिशु मन की परदुख कातरता, निश्छलता और संवेदनशीलता के साथ दुनियादारी की निर्ममता और खुरदुरेपन को वे प्रभावशाली ढंग से मूर्त करती है। उनकी एक कविता में हाड़ कॅपा देने वाली सर्दी में कूं–कूं करते पिल्ले के प्रति बालक की तरल करूणा और दुश्चिंता कि 'अपनी अम्मा को ढूंढता हुआ यह भटक गया है, उसे ठंड और डर भी लग रहा होगा' की अभिव्यक्ति हुई है। जब मॉ उस पिल्ले को अंदर ले आईं तो बालक की प्रसन्नता कितनी सहजता के साथ इन पंक्तियों में बिंबित हो गई है–

''राहत उसको मिली, खिला मन/ऑखे चमकीं/दुश्चिंता से मुक्त तुरत ही लगा उंघने/बॉह डाले गले में/सपनों में जा खोया/गर्मी पाकर कुत्ते का बच्चा भी सोया।''14

स्कूल में अकारण ही डांट खाने पर दुःखी बच्चा, बिल्ली के बच्चों को दौड़ाता बच्चा और मॉ की सीख, मॉ की बीमारी में बच्चे का शीतल स्पर्श और मौं को मिलता सुकून और बड़ा होता बच्चा – ये विविध छबियां कात्यायनी की कविता में उभरी है। सुभद्रा कुमारी चौहान की वात्सल्य युक्त कविताओं में जहां एक रोमानी भावुकता तथा आदर्शवाद है, वहीं कात्यायनी इस मायने में विशिष्ट है कि आज़ादी के पाखंड को झेलते हुए उनमें खुरदुरा यथार्थ –बोध विकसित हुआ है। 'बिल्ली के बच्चों को मत मारो बेटा' शीर्षक कविता में बिल्ली का बच्चा और वास्तविक दुनिया का संघर्ष एक मॉ की सीख के रूप में व्यक्त होता है। सहज मातृत्व तथा तरल वात्सल्य भाव के ये चित्र समकालीन हिंदी कविता में विरल ही हैं।

एक प्रचलित मान्यता है कि स्त्री का रचना संसार संकुचित होता है लेकिन कात्यायनी की कविताएं इसका प्रतिकार करती हैं। सांप्रदायिकता जैसे संवेदनशील मुद्दे पर तथा फासीवादी दृष्टिकोण को अनावृत्त करते हुए वे केवल विषैली सांप्रदायिकता को ही प्रस्तुत नहीं करती, बल्कि उसके परिणामों पर भी अपनी सतर्क टिप्पणियां देती चलती हैं, जैसे–

'तब तक वे कुछ पुराने हिसाब/चुकता करेंगे/मुहम्मद गोरी और गजनवी से लेकर/बाबर–औरंगजेब तक/...... ..../पर क्यों नहीं सोच पाते वे/कि समय का जन्म घड़ियों से नहीं हुआ है ! क्यों नहीं सोच पाते कि/ध्वंस करे भीषण भले ही कुछ समय के लिए/गढ़ता नहीं है कभी भी/इतिहास को उन्माद !15 तथा

'तर्क नहीं होता/आस्था के प्रश्न पर/........../ऑखें नहीं होती आस्था की/कुछ भी कर सकती हैं/सड़कों पर/नाच सकती है डायनों सी/खप्पर में पीती हुई बच्चों का खून/विकट रूप धर/बस्तियों को राख करती/.......... /आस्था केवल बहुमत का/अधिकार होती है/आस्था उन्माद की अम्मा होती है/............/रहना चाहते हो यदि इस मुल्क में/तो आस्थावान बनो/महान पूर्वजों के वारिस/महान बनो ।'16

दंगों की भयावहता और उन्माद की विषभरी फुफकारों के ऐसे कठिन समय पर एक क्षण को वे प्रश्न उठाती हैं कि 'क्या स्थगित कर दी जाए कविता/कुछ समय के लिए? लेकिन अगले ही क्षण वे कविता के मोर्चे पर सन्नद्ध हो उठती है –

'कविता स्थगित कर देने के बाद भी/क्या गारंटी होगी जिंदा रहने की?/कठिन से कठिन शर्तों पर भी/आदमी बने रहने की ?/और यदि बने रहेंगे आदमी/कैसे तो छोडेंगे कविता लिखने की आदत ?'17

कात्यायनी ने भाषागत स्त्रैणता को नकार कर अपनी कविताओं में बड़ी अद्भुत वक्रता और भंगिमाओं का सहारा लिया है। कहीं कहीं बेहद ठंडेपन से वे समाज की विसंगतियों को बेनकाब करती हैं और पाठक बगलें झांकने लगता है। उनकी काव्य–भाषा में आक्रामकता है तो सपाट बयानी भी, बिंबात्मकता है तो नव्य प्रयोग भी। कुछ उदाहरण दर्शनीय हैं–

'घर में सुरक्षापूर्वक/होने का अहसास वह एक/बेहद नशीली शराब की तरह पीती रही' (इस पौरूषपूर्ण समय में पृ. 67) तथा

उग्र इच्छा होती है कि जार्ज बुश के पिछवाड़े एक पलीता लगा दें। (वही पृ. 108) तथा

कविता न लिखने का निर्णय/कभी–कभी भाड़े के हत्यारों, दरबारियों/भंडुवों और मीरासियों के झुंड में/शामिल होने से बचने का निर्णय होता है। (वही पृ. 125) तथा

पूरे शहर के मुंह पर/एक तमाचे की तरह तनी हुई/खड़ी है वह पागल औरत/........../लायन्स क्लब में सन्नाटा/छा जाता है। लायनेस अपनी मांदों में दुबक जाती हैं।(सात भाईयों के बीच चंपा पृ.23)

इसीप्रकार 'प्रभु! आज़ाद ख्याल औरतों पर बलात्कार करा दे' 'हमारी ऑखों में वहशी लड़ाकू मेढ़े/एक दूसरे को घेरे/और बाहर अलगनी पर/बच्चों के दर्जन भर पोतड़ों के साथ/हमारा प्यार सूखता रहता', 'हमारी खाल गेंडे की खाल की तरह होती/चेहरे पर गधे–सा संतोष का भाव रहता/ऑखों में लोमड़ी–सी कुटिलता रहती/और सुअरों की तरह/हम विलासप्रिय रहते' जैसी पंक्तियों में उन्होंने अभिजात भाषा की धज्जियां उड़ाते हुए तीखेपन और बेलाग–लपेट के साथ अपने समय की विसंगतियों की अभिव्यक्ति दी है।'

'नई पीढ़ी की कविता में जिन स्त्री कवियों की विशिष्ट रचना–दृष्टि के कारण उनकी अलग पहचान बनी है, उनमें कात्यायनी की दृष्टि की व्यापकता और तेजस्विता विशेष महत्वपूर्ण हैं । उनकी कविताओं में प्रखर राजनैतिक चेतना है और व्यापक सामाजिक चिंता भी/.........../ उनकी कविता में भारतीय समाज और संस्कृति की मूलगामी आलोचना–दृष्टि की रचनात्मक अभिव्यक्ति है ।.......। उनकी कविताओं में विद्रोह की आंकाक्षा और आकांक्षा के विद्रोह की ऐसी अभिव्यक्ति है, जो स्त्री–जीवन के बारे में नये ढंग से सोचने की प्रेरणा देती है ।'18 प्रसिद्ध कथा लेखिका चंद्रकांता उनकी कविताओं पर विचार करते हुए लिखती हैं 'कविता उनके लिए अधिकारों की लड़ाई लड़ने का धारदार अस्त्र है।'

निष्कर्षतः कात्यायनी ने अपने समकालीन परिवेश में व्याप्त हरेक विसंगति और विद्रूप को पहचाना है और मनुष्य के जड़त्व को झकझोरने का प्रयास किया है। उनकी दृष्टि संघर्षधर्मी है। नितांत साधारण मनुष्य की तरह वह उन लोगों की उपस्थिति अपनी कविता में दर्शाती हैं जिन्होंने ध ारा के विरूद्ध तैरते हुए, अंधेरे दौर में भी न सपने देखना छोड़ा और न ही लड़ना। वे उस स्त्री से समाज को आगाह करना चाहती हैं, जिससे पिंजरे के बारे में पूछा जाये तो वह अनंत आकाश के विस्तार में उड़ने के रोमांच के बारे में बात करती है । उनकी कविता में प्रतिबद्धता की अभिव्यक्ति उन्हीं के शब्दों में कुछ इस तरह व्यक्त हुई है–

'जिसने ला पटका यहां/इस घोर और दुखभरी/दुनिया में/सपनों की एक साझा दुनिया/बनाते हुए/जीने के वास्ते/यहां निरंतर/हूं भी यदि किसी के सपनों में/तो अपने सपनों के साथ/और लोगों के साथ/जो सार्थक बनाते हैं/मेरे सपनों को...........'

उनकी विशिष्ट रचनात्मक धार को पहचानकर ही प्रकाश मनु लिखते हैं –'नई कवयित्रियों में वे जिस जमीन पर खड़ी हैं वहां कोई दूसरी कवयित्री नजर नहीं आती, दूसरी युवा कवयित्री तो हरगिज नहीं।'

I nHk

1. इस पौरूषपूर्ण समय में – कात्यायनी, पृ. 7
2. इस पौरूषपूर्ण समय में – फ्लैप पर
3. इस पौरूषपूर्ण समय में – डायरी का एक पन्ना पृ. 7
4. सात भाईयों के बीच चंपा – पृ. 59
5. इस पौरूषपूर्ण समय में फ्लैप पर
6. सात भाईयों के बीच चंपा – पृ. 29
7. सात भाईयों के बीच चंपा – पृ. 32
8. इंडिया टुडे साहित्य – वार्षिकी (2002) पृ. 7
9. इस पौरूषपूर्ण समय में – पृ. 67–69
10. समकालीन हिंदी कविता – पृ. 125
11. सात भाईयों के बीच चंपा पृ. 72
12. सात भाईयों के बीच चंपा पृ. 31
13. सात भाईयों के बीच चंपा पृ. 58
14. सात भाईयों के बीच चंपा पृ. 106–107
15. इस पौरूषपूर्ण समय में पृ. 110
16. इस पौरूषपूर्ण समय में पृ. 112–13
17. इस पौरूषपूर्ण समय में पृ. 116
18. इंडिया टुडे साहित्य वार्षिकी (2002) मैनेजर पांडेय (पृ.7–8)
19. इंडिया टुडे साहित्य वार्षिकी (2002) (पृ. 14)
20. इस पौरूषपूर्ण समय में पृ. 135
21. इंडिया टुडे साहित्य वार्षिकी (2002) पृ. 14